॥ श्रीहरिः ॥

# स्वाधीन कैसे बनें ?

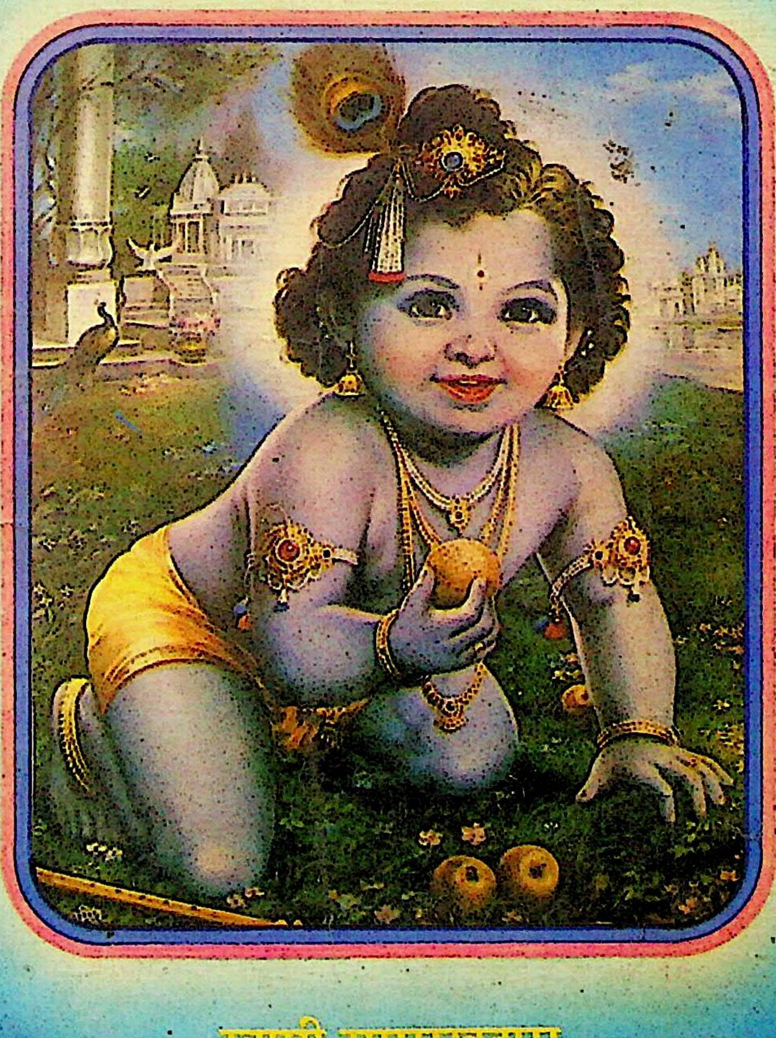

स्वामी रामसुखदास

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

स्वा॰ कै॰ व॰ १—

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

# स्वाधीन कैसे बनें ?

सीताराम मोहन सरीया
काशी मुमुक्षु भवन
अस्सी

## स्वामी रामसुखदास

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रकाशक—गोविन्दभवन-कार्यालय, गीताप्रेस, गोरखपुर



| | |
|---|---|
| सं० २०४३ से २०४९ तक | १,३५,००० |
| सं० २०५० आठवाँ संस्करण | १०,००० |
| | कुल १,४५,००० |



मूल्य—दो रुपये

मुद्रक—गीताप्रेस, गोरखपुर फोन : ३३४७२१

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ श्रीहरिः ॥

# नम्र निवेदन

परमश्रद्धेय स्वामीजी श्रीरामसुखदासजी महाराजद्वारा दिये गये कुछ प्रवचनोंका संग्रह प्रकाशित किया जा रहा है। ये प्रवचन साधकोंके लिये बहुत ही उपयोगी हैं। परमात्मप्राप्तिमें मुख्य बाधा दूर करनेके सुगम-से-सुगम अनेक उपाय इन प्रवचनोंमें समझाये गये हैं। साधक अपनी रुचिके अनुसार कोई भी उपाय काममें लेकर सुगमतासे परम लक्ष्यकी प्राप्ति कर सकते हैं।

पारमार्थिक रुचि रखनेवाले सभी साधकोंके लिये यह सुनहरा अवसर है कि वे इन प्रवचनोंको समझ-समझकर पढ़ें और अपने काममें लाकर परमलाभ लें।

विनीत—

**प्रकाशक**

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ श्रीहरिः ॥

# विषय-सूची


| विषय | पृष्ठ-संख्या |
| --- | --- |
| १. पराधीनतासे छूटनेका उपाय | १ |
| २. भगवान्‌में लगनेका उपाय | ८ |
| ३. परमात्मप्राप्तिकी सुगमता | १६ |
| ४. परमात्मप्राप्तिमें मुख्य बाधा—सुखासक्ति | २४ |
| ५. सुखासक्तिसे छूटनेका उपाय | ३२ |


CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ श्रीहरिः ॥

# पराधीनतासे छूटनेका उपाय

**सींथल**
**१५-४-८६**

पराधीनता सबको बुरी लगती है। पराधीन मनुष्यको स्वप्नमें भी सुख नहीं मिलता—**'पराधीन सपनेहुँ सुखु नाहीं'** (मानस १। १०२। ३)। ऐसा होनेपर भी मनुष्य दूसरेसे सुख चाहता है, दूसरेसे मान चाहता है, दूसरेसे प्रशंसा चाहता है, दूसरेसे लाभ चाहता है— यह कितने आश्चर्यकी बात है! वस्तुसे, व्यक्तिसे, परिस्थितिसे, घटनासे, अवस्थासे जो सुख चाहता है, आराम चाहता है, लाभ चाहता है, उसको पराधीन होना ही पड़ेगा, बच नहीं सकता, चाहे ब्रह्मा हो, इन्द्र हो, कोई भी हो। मैं तो यहाँतक कहता हूँ कि भगवान् भी बच नहीं सकते। जो दूसरेसे कुछ भी चाहता है,वह पराधीन होगा ही।

परमात्माको चाहनेवाला पराधीन नहीं होता; क्योंकि परमात्मा दूसरे नहीं हैं। जीव तो परमात्माका साक्षात् अंश है। परन्तु परमात्माके सिवाय दूसरी चीज हम चाहेंगे तो पराधीन हो जायँगे; क्योंकि परमात्माके सिवाय दूसरी चीज अपनी है नहीं। दूसरी चीजकी चाहना न होनेसे ही परमात्माकी चाहना पैदा होती है। अगर दूसरी चीजकी चाहना न रहे तो परमात्मा-प्राप्ति हो जाय।

कुछ भी चाहना हो,वह चाहना दरिद्रताको सिद्ध करती है। अतः मुफ्तमें दरिद्रता क्यों खरीदते हो ? अगर सुखी होना चाहते हो तो दूसरेसे सुख मत चाहो। दूसरेसे हमें लाभ होगा, यह खाता

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भीतरसे उठा दो। दूसरेसे कुछ नहीं हो सकता। दूसरेसे कुछ भी चाहनेवाला क्या पराधीनतासे बच सकता है ? क्या वह स्वतन्त्र हो सकता है ? इसलिये यह बात पक्की कर लें कि कोई भी चाहना हम नहीं रखेंगे। परमात्मासे भी किसी चीजकी चाहना नहीं रखेंगे।

जो अपनेको उत्पत्ति-विनाशशील वस्तुके अधीन मानेगा, वह सुखी कैसे होगा ? क्योंकि स्वयं उत्पन्न और नष्ट होनेवाला नहीं है। स्वयं अविनाशी है। एक और विलक्षण बात है कि जो दूसरेसे चाहता है, वह वास्तवमें अनधिकारी है, अधिकारी है ही नहीं। जैसे, जो दूसरेसे सम्मान चाहता है, वह सम्मानके लायक नहीं है। जो सम्मानके लायक होगा, उसको सम्मानकी चाहना नहीं होगी। आप ख्याल करें कि अठारह अक्षौहिणी सेनामें, जिसमें सब क्षत्रिय-ही-क्षत्रिय हैं, स्वयं क्षत्रिय होते हुए भी भगवान् श्रीकृष्णका एक व्यक्तिका सारथि बन जाना, उसके रथके घोड़े हाँकना कितने तिरस्कारकी बात है ! घोड़े हाँकना क्या बड़ा काम है ? क्या यह सम्मानकी बात है ? परन्तु उनको ऐसा काम करनेमें शर्म नहीं आती। वे सम्मानके लायक हैं,इसलिये उनमें सम्मानकी इच्छा नहीं है। वे सम्मानके लायक हैं, इसका क्या पता ? उधर सबसे पहले भीष्मजी शङ्ख बजाते हैं और इधर सबसे पहले भगवान् श्रीकृष्ण शङ्ख बजाते हैं ! कारण कि कौरवसेनामें सबसे मुख्य भीष्मजी हैं और पाण्डवसेनामें सबसे मुख्य भगवान् श्रीकृष्ण हैं।

जिसको सम्मानकी इच्छा रहती है, वह सम्मानका गुलाम है, सम्मानके लायक है ही नहीं। जिसको चेलेकी इच्छा रहती है, वह चेलेका गुलाम (चेला) है, गुरु है ही नहीं। जिसको धनकी इच्छा रहती है, वह धनका गुलाम है, धनका मालिक है ही नहीं। अतः इच्छाको मनसे निकाल ही देना चाहिये।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जीवात्माके लिये आया है—'**ईस्वर अंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुखरासी॥**' (मानस ७। ११७। १) और ब्रह्मके लिये आया है—'**ब्यापकु एकु ब्रह्म अबिनासी। सत चेतन घन आनँद रासी॥**'(मानस १। २३। ३)। अतः जो आनन्दराशि ब्रह्म है, उसीका साक्षात् अंश यह जीवात्मा है। दोनोंके समान लक्षण बताये गये हैं। ऐसा होते हुए भी जीव तुच्छ चीजोंकी चाहना करे, यह कितनी बेइज्जतीकी बात है! कितना बड़ा इसका पद है! कितना इसका अधिकार है! कितना इसका महत्त्व है! परन्तु तुच्छ चीजोंकी इच्छा करता है, उनके मिलनेसे राजी होता है, उन चीजोंसे अपनी इज्जत मानता है, बेइज्जतीमें इज्जत मानता है! कहाँ चली गयी अक्ल सारी? इसमें जितनी शंकाएँ हों, आप पूछो।

श्रोता—शंका तो कोई नहीं, पर सामने जो राजा-महाराजा दीखते हैं........!

स्वामीजी—जो दीखता है, वह नाशवान् है।'आप बताओ, कोई अविनाशी दीखता है क्या? सामने सब नाशवान्-ही-नाशवान् दीखता है। शरीर, इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, धन-सम्पत्ति, राज्य, पद, अधिकार आदि जो कुछ भी दीखता है, चाहे इन्द्रासन ही क्यों न दीखता हो, वह सब-का-सब नाशवान् है।

श्रोता—महाराजजी! संगका असर पड़ता है। ऐसा कोई सामने देखनेमें नहीं आता, जो सम्मान न चाहता हो!

स्वामीजी—मैं कहता हूँ, आप मान लो। दूसरेको देखनेकी जरूरत ही क्या है! यह बात तो आप तब कह सकते हैं कि किसीको भोजन करते देखकर आपको भूख लग जाय! अगर दूसरेको देखनेसे असर पड़ता है, तो दूसरेको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

भोजन करते देखकर भूख लगनी चाहिये और दूसरेको भोजन करते न देखकर भूख नहीं लगनी चाहिये। दूसरेको जल पीते देखकर प्यास लगनी चाहिये और दूसरेको जल पीते न देखकर प्यास नहीं लगनी चाहिये।

**भेड़चाल संसार है, एक एक के लार।**
**भिष्टा पर भागी फिरे, कैसे हो उद्धार ॥**

यह तो भेड़चाल है कि दूसरा चाहे तो मैं चाहूँ। दूसरा नरकोंमें जाय, तो फिर आप भी नरकोंमें पधारो ! क्या यह मनुष्यपना है ? जिसके मनमें सम्मान आदिकी इच्छा है, उसकी कितनी इज्जत है और जिसके मनमें सम्मान आदिकी इच्छा नहीं है, उसकी कितनी इज्जत है यह आपको दीखता है कि नहीं ? जिसके मनमें सम्मानकी, धनकी इच्छा नहीं है, जो कुछ भी नहीं चाहता, उसकी बेइज्जती हो सकती है क्या ? **'जिनको कछू न चाहिये, सो साहनपति साह'**। लोग उसके आगे नतमस्तक हो जायँगे !

भगवान् श्रीराम हनुमान्‌जीसे कहते हैं कि तू धनिक है और मैं तेरा कर्जदार हूँ, तू मेरेसे खत लिखा ले ! जो ले तो ले, पर देनेके लिये पासमें हो नहीं, वही खत लिखाया करता है। भगवान् कहते हैं कि हे हनुमान् ! मैं तेरा बदला चुकानेमें असमर्थ हूँ, मैं दे नहीं सकता, इसलिये तू खत लिखा ले। मैं तेरा कर्जदार हूँ। कर्जदार होनेमें कारण क्या है ? भगवान् इसका स्पष्ट उत्तर देते हैं—

**मदङ्गे जीर्णतां यातु यत् त्वयोपकृतं कपे।**
**नरः प्रत्युपकाराणामापत्स्वायाति पात्रताम् ॥**

(वाल्मीकि० उत्तर० ४० । २४)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तुमने जो मेरा उपकार किया है, यह कर्जा मेरेपर ही रहने दे। मैं कर्जा उतारना नहीं चाहता। मैं तो सदा ही कर्जदार बना रहना चाहता हूँ। कारण कि जो उपकारका बदला चुकाना चाहता है, वह विपत्ति चाहता है कि इसपर विपत्ति आये तो मैं इसका उपकार करूँ, इसकी सहायता करूँ। तेरेको बाप घरसे निकाल दे, स्त्रीको राक्षस ले जाय, साथ देनेवाला कोई नहीं हो, तब मैं तेरी सहायता करूँ! अतः तेरेपर कभी विपत्ति आये ही नहीं और मैं सदा ही तेरा कर्जदार बना रहूँ! इस प्रकार अगर मनमें कोई भी चाहना न हो, तो भगवान् ऋणी हो जायँ! भगवान् शंकरने रामजीकी सेवा करनेके लिये हनुमान्‌जीका ही रूप धारण क्यों किया? उन्होंने सोचा कि सेवा करनेके लिये बन्दरके समान कोई नहीं हो सकता; क्योंकि उसको न रोटी चाहिये, न कपड़े चाहिये, न मकान चाहिये; कुछ भी नहीं चाहिये। पत्ते खा ले, वृक्षोंपर रहे और कपड़ोंकी जरूरत नहीं! छोटे-से-छोटा और बड़े-से-बड़ा सब काम रामजीका करेंगे और लेंगे कुछ भी नहीं।

जब राक्षसोंने सबको मूर्च्छित कर दिया, तो सबसे पहले जाम्बवान् जगे। जाम्बवान्‌ने जगते ही पूछा कि हनुमान् जीवित हैं या नहीं! यह नहीं पूछा कि रामजी जीवित हैं या नहीं। कितनी विलक्षण बात है! हनुमान्‌जी जीवित हैं तो सब जी जायँगे, चिन्ताकी कोई बात नहीं। इस प्रकार सबके प्राण हनुमान्‌जीके अधीन हैं। परन्तु उनकी भी पोल बताऊँ आपको! जब हनुमान्‌जी संजीवनी लानेके लिये चले, तब उन्होंने अपने बलका बखान किया कि अभी लेकर आता हूँ—'**चला प्रभंजन सुत बल भाषी।**' (मानस ६। ५६। १)। इससे क्या हुआ? रातके समय प्यास लग गयी और कालनेमि राक्षससे ठगे गये, फिर संजीवनीका पता नहीं लगा और संजीवनी ले आये तो भरतजीका

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बाण लगा ! परन्तु दिनके समय लंकामें आग लगा दी, तब प्यास नहीं लगी ! कारण क्या था ? जब लंकामें गये तो पहले रघुनाथजीको याद किया—**'बार बार रघुबीर सँभारी ।'** (मानस ५।१।३) ।

जब हनुमान्‌जी सीता माताके पास गये तो सामने फल लगे देखकर उनको भूख लगी। माँको देखते ही बालकोंको भूख लग जाया करती है ! और माँको मनमें भी आ जाता है कि कुछ खिला दूँ। सीता माताने सोचा कि यह बालक है, इसको कोई राक्षस खा जायगा ! इसलिये कहा कि 'न बेटा, हाऊ खा जायगा !' हनुमान्‌जीने कहा कि माँ ! मेरेको राक्षसोंका भय नहीं है ! अगर तुम सुख मानो, मनमें प्रसन्न हो जाओ तो फल खा लूँ—**'तिन्ह कर भय माता मोहि नाहीं। जौं तुम्ह सुख मानहु मन माहीं ॥'** (मानस ५। १७। ५)। फल भी खाना है, तो माँकी राजीके लिये ! माँने कहा कि बेटा ! रघुनाथजी महाराजको याद करके मीठे-मीठे फल खाओ—**' रघुपति चरन हृदयँ धरि तात मधुर फल खाहु ॥ '**(मानस५।१७)। हनुमान्‌जीने फल खाये और राक्षसोंको अच्छी तरहसे मसल दिया।

जब हनुमान्‌जी छिपकर लंकामें प्रवेश कर रहे थे तो लंकिनीने उनको देख लिया और रोक दिया। हनुमान्‌जीने उसको मुक्का मारा। लंकिनी बेचारी तो अपनी ड्यूटीपर पक्की थी, उसको मुक्का मार दिया, यह कोई न्याय है ? अनजान आदमीको रोकना तो पहरेदारका कर्तव्य है। बीकानेरके राजा श्रीगंगासिंहजी महाराजकी एक बात मैंने सुनी है। एक बार वे मामूली आदमी बनकर पहरेदारके पास गये और कहा कि मुझे भीतर जाने दो। पहरेदारने मना कर दिया कि नहीं जाने देंगे। गंगासिंहजीने दो रुपये निकाले और कहा कि ये दो रुपये ले लो, मुझे भीतर जाने

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दो। पहरेदारने उनको जोरसे एक थप्पड़ लगाया! वे चुपचाप पीछे लौट गये। सुबह उस पहरेदारको बुलाया और कहा कि 'अरे! इतनी जोरसे थप्पड़ मारा करते हैं क्या! तात्पर्य है कि यह पहरेदारका अधिकार है। गंगासिंहजी भी कुछ कह नहीं सके कि तुमने थप्पड़ कैसे मारा? उनके मनमें तो यह आया कि ऐसे ईमानदार आदमीको अच्छी जगहपर रखना चाहिये; मेरेसे गलती हुई कि ऐसे आदमीको मामूली पहरे पर रखा। परन्तु हनुमान्‌जीने लंकाकी पहरेदार लंकिनीको मुक्का मारा। कारण क्या था? लंकिनीने कहा कि चोर मेरा आहार होता है—**'मोर अहार जहाँ लगि चोरा॥'**(मानस ५।४।२)। इसपर हनुमान्‌जीने उसको मुक्का मारा कि अगर चोर तेरा आहार होता है तो तूने सीताजीको चुरानेवाले रावणको क्यों नहीं अपना आहार बनाया? इतनी जोरसे मुक्का मारा कि उसके मुखसे खून बहने लगा और वह कहती है कि आज सुख मिला!—

**तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।**
**तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग॥**

(मानस ५।४)

कारण कि उसकी दृष्टि अपने शरीरकी तरफ नहीं है, प्रत्युत सत्संगसे होनेवाले लाभकी तरफ है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ श्रीहरिः ॥

# भगवान्‌में लगनेका उपाय

कलकत्ता

१६-१-८६

खाना, पीना, सोना, बातें करना, आलस्यमें पड़े रहना—इसमें जैसा मन लगता है, वैसा पाठ-पूजनमें नहीं लगता! कबीर साहबने कहा है—

**कबीर मनुआँ एक है, भावे जहाँ लगाय।**
**भावे हरि की भगति कर, भावे बिषय कमाय॥**

दो ही बातें हैं। बीचमें जीव है, एक तरफ संसार है और एक तरफ परमात्मा है। संसारसे संयोगजन्य सुख मिलता है और संसारमें आसक्ति होती है, प्रियता होती है। परन्तु भगवान्‌के भजन, पाठ, जप आदिमें प्रियता नहीं होती। मन तो एक ही तरफ लगेगा। अतः मनको संसारसे उठाओ। खाना, पीना, सोना आदिमें सुख मत लो। इनमें सुख लेते रहोगे तो मन भगवान्‌में नहीं लगेगा; क्योंकि मनको खुराक तो संसारसे ही मिल जायगी!

हमें संसारकी अनुकूल परिस्थिति अच्छी लगती है और प्रतिकूल परिस्थिति बुरी लगती है, तो हम संसारके ही ग्राहक हुए न? कसौटी लगा करके देखो कि हम परमात्माके ग्राहक हैं या संसारके? एक तरफ परमात्मा है और एक तरफ संसार है। अगर संसारकी अनुकूल परिस्थिति, अनुकूल पदार्थ, अनुकूल अवस्था अच्छी लगती है और प्रतिकूल परिस्थिति आदि बुरी लगती है, तो हम परमात्माके भक्त नहीं हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जो लोग रुपया कमानेके लिये दुकानपर बैठते हैं, उनके सामने कई अनुकूल व्यक्ति आते हैं और कई प्रतिकूल व्यक्ति आते हैं। परन्तु वे न तो राजी होते हैं, न नाराज होते हैं। अपने व्यापारमें लगे रहते हैं कि राजी-नाराजगीसे क्या लेना, हमें तो पैसा कमाना है! इस तरह जैसे गृहस्थ पैसा कमानेमें लगे हैं, ऐसे साधकोंको तो कम-से-कम परमात्मामें लगना चाहिये। अनुकूलता-प्रतिकूलतामें फँस जाते हैं—यह बड़ी भारी बाधा है। गृहस्थोंका ज्यादा समय जाता है रजोगुणमें और साधुओंका ज्यादा समय जाता है तमोगुणमें !ऐसी बात मेरे मनमें वर्षोंसे आयी थी, पर कही आज है! आलस्यमें, प्रमादमें, खाने-पीनेमें, सोनेमें—इनमें साधुओंका ज्यादा समय जाता है। क्या करें बताओ! स्वयं आप अपनेको ठीक करो तो कर सकते हो और कोई उपाय नहीं है इसका। आप खुद ही बाबाजी बन गये, अब कौन कहे आपको? मैंने पुस्तकोंमें पढ़ा है कि खुदमें तो अक्ल नहीं और दूसरेकी मानता नहीं, उसको कौन समझाये?

अगर कुछ मिलता है तो परमात्मा ही मिलता है और कुछ मिलता है ही नहीं। परमात्माके सिवाय कभी किसीको कुछ नहीं मिला, कुछ नहीं मिलेगा और कुछ नहीं मिल सकता। वहम होता है कि इतना धन मिल गया, इतना मान मिल गया, शरीर मिल गया, नीरोगता मिल गयी, विजय मिल गयी, आराम मिल गया—बिलकुल कोरा धोखा है! आज मरो, तो कुछ नहीं मिला। आपलोग ध्यान दें। मिलना भगवान्‌का ही है, उसके सिवाय और मिलना है ही नहीं। धन, सम्पत्ति, मान, सुख आदिमें वृत्ति रहेगी तो बेईमानी होगी, चालाकी होगी, ठगाई होगी, धोखेबाजी होगी और आगे इसका फल होगा दुःख, नरक, चौरासी लाख योनियाँ! मिलना अगर देखा जाय तो

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परमात्मतत्त्वके सिवाय मिलना कुछ है ही नहीं।

श्रोता—प्रभुकी कथामें मन लगानेसे प्रभुकी कृपा हो जायगी क्या ?

स्वामीजी— भगवान्‌की और भक्तोंकी कथामें अगर मन लगता हो तो बहुत ही उत्तम बात है। आप उसको तल्लीन होकर पढ़ो, सुनो तो भगवान्‌की कृपा अपने-आप हो जायगी। भगवान्‌के और भक्तके चरित्रमें अगर मन लग जायगा, तल्लीन हो जायगा तो कृपा किये बिना भगवान् रह ही नहीं सकेंगे; कृपा जबर्दस्ती होगी। भगवान् और भक्त— इन दोनोंके चरित्रोंमें मन लग जायगा तो फिर एकदम ठीक हो जायगा।

**हेतु रहित जग जुग उपकारी। तुम्ह तुम्हार सेवक असुरारी॥**
**स्वारथ मीत सकल जग माहीं। सपनेहुँ प्रभु परमारथ नाहीं॥**

(मानस ७। ४७। ३)

केवल भगवान् और उनके भक्त— ये दो ही भला करनेवाले हैं। तीसरे किसी व्यक्तिसे, किसी वस्तुसे, किसी परिस्थितिसे, किसी योग्यतासे आपका भला हो जायगा— यह बात है ही नहीं। किसीसे कुछ होनेका है नहीं। न धनसे कुछ होगा, न मानसे कुछ होगा, न बड़ाईसे कुछ होगा, न मकानसे कुछ होगा, न परिवारसे कुछ होगा। होगा कुछ नहीं,केवल समय बरबाद हो जायगा, पासमें रही हुई पूँजी खत्म हो जायगी और मरना पड़ेगा !

श्रोता—स्वामीजी ! हम सन्तको ठीक-ठीक जानते नहीं,तो क्या उनकी कृपासे सब हो जायगा ?

स्वामीजी—उनको जानने-न-जाननेकी चिन्ता मत करो। उनको जानो या मत जानो, उनके कहनेके अनुसार करो। हो जायगा क्यों ? अभी होना चाहिये, अभी भगवान्‌में मन लगना चाहिये। हो जायगा— इसका क्या भरोसा ? देखो भाई, मैं तो इसको धोखा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मानता हूँ कि ये सन्त मिल गये, महात्मा मिल गये, गुरुजी मिल गये, इनकी कृपासे सब हो जायगा—ऐसा मान लेता है, पर करता कुछ नहीं। सन्त मिल गये तो तुम्हारेमें परिवर्तन आना चाहिये न ?जैसे नींदमें प्यास लगी और जल पीते हैं, पर उससे तृप्ति नहीं होती, ऐसे ही सन्त मिलनेपर,अच्छा संग मिलनेपर भी हमारी तृप्ति नहीं हुई, हमारी दशा वैसी ही है, तो क्या मिल गया ? हमारा जीवन बदल जाना चाहिये, जीवन भगवान्‌में लग जाना चाहिये।

भगवान्‌में, भगवान्‌के चरित्रमें, भगवान्‌के नाममें, भगवान्‌के गुणोंमें, भगवान्‌की लीलामें मन तल्लीन हो जाय तो यह लाभकी बात है। परन्तु आजकल पाठ, जप आदि करते हैं तो बारी निकालते हैं, ड्यूटी बजाते हैं, एक आफत मिटाते हैं। 'रोजाना इतना जप आदि करना ही पड़ेगा, नहीं करें तो सन्तोष नहीं होता; अतः पाठ भी कर लो, जप भी कर लो, इतना सुन लो, तो एक आफत मिट गयी, छुट्टी हो गयी। उन्होंने कह दिया और हमने स्वीकार कर लिया, इसलिये पाठ करना पड़ता है, इतना जप करना पड़ता है। किसी तरह पूरा कर दो। पाठ पूरा हो गया, तो अब पुस्तक बाँधकर रख दो' आदि-आदि। बालक पढ़ता है, पर छुट्टी होते ही दौड़ता है कि चलो आफत मिटी ! इस तरह पाठ, जप आदिको आफत समझनेसे, भार समझनेसे लाभ थोड़े ही होगा? समय खाली पड़ा है, पर भगवान्‌की कथा आदिमें मन नहीं लगता—यह मनुष्यके लिये बड़ा काला दिन है। समय बरबाद करनेसे तो यही अच्छा है कि किसी कामधंधेमें लग जाओ।

सिद्धान्त है कि परमात्माके सिवाय मिलता कुछ नहीं, केवल धोखा होता है। चाहे आपके पास लाखों-करोड़ों रुपये हो जायँ,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

चाहे आपके हजारों श्रोता आ जायँ और आपको नमस्कार करें, आपका आदर करें पर मरोगे तो कुछ नहीं मिलेगा ! क्योंकि यह मिलनेकी चीज है ही नहीं। बढ़िया भोजन मिल गया, बढ़िया कपड़ा मिल गया, बढ़िया सोनेको जगह मिल गयी, आराम मिल गया, तो केवल धोखा हो गया, मिला कुछ नहीं। इसलिये सावधान रहना चाहिये।

मैं तो यह कहता हूँ कि आप हरदम नाम-जप करो और दो-दो, चार-चार मिनटमें भगवान्‌को नमस्कार करके भीतरसे कहो कि 'हे नाथ ! आपको भूलूँ नहीं'; 'हे प्रभु !आपके चरणोंमें मन लग जाय'; 'हे नाथ ? आप मुझे मीठे लगें, प्रिय लगें।' आपकी एक ही माँग हो कि भगवान्‌में चित्त खिंच जाय, भगवान् मीठे लगें, भगवान्‌का नाम मीठा लगे, भगवान्‌के गुण मीठे लगें, भगवान्‌की लीला मीठी लगे, भगवान्‌के चरित्र मीठे लगें, प्रिय लगें।

श्रोता—मनसे रामायणजीको गुरु मान लें क्या ? व्यक्तिविशेषको गुरु माननेसे उसके गुण-दोषोंपर मन चला जाता है।

स्वामीजी—बिलकुल मान लो, निहाल हो जाओगे। रामायणजीको गुरु मानकर परिक्रमा करो, दण्डवत्-प्रणाम करो, आदरसे पाठ करो और उसमें जो बातें लिखी हैं, उसको गुरु-शिक्षा, गुरु-वचन मान लो। हो जायगा कल्याण ! गुरु 'वचन' ही होता है, 'शरीर' नहीं होता। मेरी सलाह भी यही है कि व्यक्तिको गुरु बनाना ही नहीं चाहिये। व्यक्तिको गुरु बनानेसे अड़चन होगी, उसमें फँस जाओगे, दूसरी जगह नहीं जा सकोगे, अच्छी बातोंसे वञ्चित रह जाओगे। अतः चाहे रामायणको ले लो, चाहे गीताजीको ले लो, चाहे पहले हुए किसी सन्त-महात्माको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ले लो, चाहे अभी कोई अच्छा लगे, उसको ले लो और गुरु-शिष्यका सम्बन्ध न जोड़कर उनसे जो अच्छी बातें मिलें, उनका तत्परतासे पालन करो। अपनेमें जो त्रुटियाँ हों, उनको दूर करो। उनसे सलाह पूछ लो कि क्या करें? कैसे करें? मेरेसे कोई साधनकी बात पूछता है तो मेरेको बड़ा आनन्द आता है, प्रसन्नता होती है। मैं गुरु बनूँ और दूसरा चेला बने—यह तो मुझे अच्छा नहीं लगता, पर कोई साधनकी बात पूछे तो यह मुझे बहुत अच्छा लगता है और जैसी बात आयेगी, वैसी बता दूँगा। कपट रखूँगा नहीं, छिपाऊँगा नहीं। लोग कहते हैं कि चेला बनो तो बतायें और मैं कहता हूँ कि चेला न बनो तो बताऊँ।

श्रोता—ठाकुरजीकी प्राप्तिकी तीव्र आकाङ्क्षा होती है, ठाकुरजीके प्रति प्रेम उमड़ता है, इससे प्रभुका साक्षात्कार हो सकता है क्या?

स्वामीजी—हो सकता है। प्रेम उमड़ेगा, तब साक्षात्कार होगा। वह ठण्डा नहीं पड़ना चाहिये, जैसे सोडावाटरकी बोतलमें भभका आया, फिर शान्त हो गया! उसको तो बढ़ना चाहिये। कलसे आज ज्यादा हो, आजसे कल ज्यादा हो, कलसे परसों ज्यादा हो—ऐसे प्रतिदिन, प्रतिक्षण भगवान्‌में प्रेम बढ़ना चाहिये। भगवान्‌में प्रेम होना ही भजन है—**'पन्नगारि सुनु प्रेम सम भजनु न दूसर आन'**। प्रेमके समान दूसरा कोई भजन नहीं है। भगवान्‌में जो आकर्षण है, वही भजन है। इसके लिये भगवान्‌से बार-बार प्रार्थना करो, एकान्तमें बैठकर भक्तोंके चरित्र पढ़ो।

एकान्तमें बैठ जाओ और कमरा बन्द कर लो। न हम किसीको देखें और न हमें कोई देखे। फिर भक्तोंके चरित्र पढ़ो, स्तोत्र पढ़ो, विनयपत्रिका पढ़ो। पढ़ते-पढ़ते जब हृदय गद्गद

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हो जाय, नेत्रोंसे आँसू आने लगें, उस समय पुस्तक बन्द कर दो और नाम-जप करो, कीर्तन करो, प्रार्थना करो कि 'हे नाथ !आपको भूलूँ नहीं' ऐसा कहते जाओ। ऐसा करते-करते जब आँसू सूख जायँ, वैसा भाव नहीं रहे, तब जहाँ पढ़नेसे वैसा भाव बना, उससे एक पृष्ठ पीछेसे पुनः पढ़ो। पढ़ते-पढ़ते वहाँ आते ही वैसा भाव बन जाय, तो फिर पुस्तक छोड़ दो। पुस्तक पूरी करनेका लक्ष्य बिलकुल न रहे, भगवान्‌में मन लगानेका लक्ष्य रहे। जहाँ पढ़ते-पढ़ते मन लगा, वहाँ पुस्तक छोड़ दो और प्रार्थना करो, भगवान्‌से अपनी बात कहो, भगवान्‌के लिये रोते रहो। यह साधन आप घंटा-दो-घंटा रोजाना करके देखो। उस समय दूसरा कोई काम आ जाय तो उसको छोड़ दो कि अभी नहीं। करोड़ काम बिगड़ते हों तो बिगड़ने दो, पर भगवान्‌का स्मरण मत छोड़ो—'**कोटिं त्यक्त्वा हरिं स्मरेत्।**' भक्तोंके चरित्रमें मन लगे तो बहुत बढ़िया है ! भगवान्‌से भी भगवान्‌के भक्तका चरित्र बढ़िया है। गोस्वामीजी महाराज लिखते हैं—

**मोरे मन प्रभु अस बिस्वासा। राम ते अधिक राम कर दासा॥**

(मानस ७। १२०। ८)

कोरा लिखते ही नहीं हैं, काममें भी लाते हैं। गोस्वामीजी महाराज अपने मनसे रामजीके साथ रहते हैं, इसलिये 'इहाँ' लिखते हैं—'**इहाँ प्रात जागे रघुराई**'(६। १७। १) और रावणके साथ नहीं रहते, इसलिये 'उहाँ' लिखते हैं—'**उहाँ सकोपि दसानन**·····'(६। ३२ख) आदि। परन्तु जहाँ भगवान् और भक्त—दोनोंकी बात आती है, वहाँ गोस्वामीजी भगवान्‌को छोड़कर भक्तके साथ रहते हैं; जैसे —भरतजीका वर्णन करते समय वे भरतजीके लिये 'इहाँ' लिखते हैं—'**इहाँ भरतु सब सहित सहाए**' (२। २३३। २) और रामजीके लिये 'उहाँ'

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लिखते हैं—'उहाँ रामु रजनी अवसेषा।' (२।२२६।२)

भरत चरित करि नेमु तुलसी जो सादर सुनहिं।
सीय राम पद पेमु अवसि होइ भव रस बिरति॥
(२।३२६)

गोस्वामीजीने रामायण लिखना शुरू किया तो सबसे पहले भरतजीका चरित्र (अयोध्याकाण्ड) ही लिखा है। इसके बाद बालकाण्ड लिखना शुरू किया। इसलिये अयोध्याकाण्ड और बालकाण्ड—दोनोंके आरम्भमें गुरु-वन्दना की गयी है और काण्डोंके आरम्भमें नहीं। कारण कि पहले गुरु-वन्दना अयोध्याकाण्डमें की और उसके बाद ग्रन्थका आरम्भ किया तो बालकाण्डके आरम्भमें गुरु-वन्दना की, फिर लिखते चले गये। इस प्रकार गोस्वामीजीने पहले भक्तका चरित्र लिखा, फिर भगवान्‌का चरित्र लिखा।

——::o::——

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ श्रीहरिः ॥

# परमात्मप्राप्तिकी सुगमता

**कलकत्ता**

**३-१-८६**

एक बड़े महत्त्वकी बात है। इस तरफ आप ध्यान दें। जितने क्रिया और पदार्थ हैं, वे सब-के-सब उत्पन्न और नष्ट होनेवाले हैं। दूसरे शब्दोंमें कहें तो वे परिवर्तनशील हैं। क्रियाका आरम्भ और अन्त होता है। वस्तु पैदा होती है और नष्ट होती है। कोई घटना होती है तो वह मिट जाती है। परिस्थिति आती है, वह एकरूप नहीं रहती। अवस्था एकरूप नहीं रहती। व्यक्ति एकरूप नहीं रहता। ये सब-के-सब हरदम बदलते रहते हैं। ये सब मिल करके ही संसार है। इसीको संसार कहते हैं। इससे जो सुख चाहता है, वह बहुत बड़ी भूल करता है, मामूली भूल नहीं करता। स्वयं परमात्माका अंश है, परिवर्तनरहित है, नित्य निर्विकार है, उसको इस परिवर्तनशील संसारसे क्या मिलेगा? कुछ मिलनेका नहीं है। धोखा हो जायगा, रोना पड़ेगा, पश्चात्ताप करना पड़ेगा! इस बातको ठीक तरहसे मनुष्य ही समझ सकता है। एक दृष्टिसे देखें तो देवताओंको भी यह अधिकार नहीं है। वे भी भोगोंमें फँसे रहते हैं। जैसे, इस संसारमें बहुत बड़े धनी आदमी हैं, वे सत्संगमें प्रायः नहीं जा पाते, सद्‌गुण-सदाचारका पालन प्रायः नहीं कर पाते, तो फिर इनसे भी ज्यादा भोगी देवता क्या करेंगे? मनुष्योंमें योग्यता जरूर है, पर भोगोंकी इतनी बहुलता हो गयी कि वे इनसे छूट नहीं सकते। भोगोंकी और

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संग्रहकी लालसाके कारण वे बड़े जोरोंसे पतनकी तरफ जा रहे हैं। वे नरकोंसे बच नहीं सकते ! भूत, प्रेत, पिशाच, राक्षस, असुर बनेंगे ! वे महान् आफतसे बच नहीं सकते।

आप स्वयं उस परमात्माके साक्षात् अंश हैं, जो निर्विकाररूपसे सदा ज्यों-का-त्यों रहता है। उसमें कभी परिवर्तन हुआ नहीं, कभी परिवर्तन होगा नहीं और कभी परिवतर्नकी सम्भावना नहीं है। उसके अंश आप भी वैसे-के-वैसे ही हैं। अनेक युग बीत गये, पर आप स्वयं वही हैं—'**भूतग्रामः स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते।**'(गीता ८। १९)। परन्तु परिवर्तनशील पदार्थोंकी तरफ ध्यान रखनेवाला उस अपरिवर्तनशील तत्त्वको कैसे समझ सकता है ? परिवर्तनशील वस्तुको महत्त्व देनेके कारण वह उसीमें उलझ जाता है; अतः अपरिवर्तनशील तत्त्वकी तरफ वह अपना ध्यान ले जा सकता ही नहीं।

आपके जितने मनोराज्य हैं कि 'यह काम हो जाय; वह काम हो जाय,' वे सब-के-सब काम हो जायँ तो कितनी खुशी होगी ! ऐसे ही जितने परिवर्तनशील पदार्थ, व्यक्ति, वस्तु, घटना, परिस्थिति हैं, इन सबका अभाव हो जाय तो कितना आनन्द होगा—इसका कोई ठिकाना नहीं ! आपको लड़कीकी शादीकी चिन्ता रहती है कि लड़की बड़ी हो गयी, क्या करें ? उसको ठीक घर मिल जाता है, अच्छा वर मिल जाता है और आप योग्यताके अनुसार उसका ब्याह कर देते हो, उसको अपने घर पहुँचा देते हो तो आपको एक प्रसन्नता होती है। आपकी चिन्ता मिट जाती है कि मेरी कन्या अच्छे घर चली गयी, वह सुख पायेगी। इस तरह ये सब जितने झंझट हैं, संसारकी जितनी वस्तु, परिस्थिति, घटना, अवस्था आदि है, वह सब-की-सब अपने घर चली जाय, प्रकृतिमें चली जाय और आप उससे अलग हो जाओ तो कितना आनन्द होगा ! आप इस परिवर्तनशील संसारसे ऊँचे उठ जाओगे, इसमें फँसे नहीं रहोगे तो आपको मुक्तिका आनन्द मिलेगा। अगर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संसारसे विमुख होकर परमात्माके सम्मुख हो जाओगे तो आपको परम आनन्द मिलेगा। इस प्रकार दुःखोंकी अत्यन्त निवृत्ति और परम आनन्दकी प्राप्ति होना मनुष्यमात्रके लिये सुगम है। अगर आप सुगम नहीं मानते हो तो सम्भव तो अवश्य ही है। पशु, पक्षी, वृक्ष आदिके लिये इसकी सम्भावना नहीं है। क्या भूत, प्रेत, पिशाच आदिके लिये इसकी सम्भावना है? क्या गाय, भैंस, भेड़, बकरी आदिके लिये इसकी सम्भावना है? वास्तवमें मनुष्यके लिये इसकी सम्भावना है — इतनी ही बात नहीं है, प्रत्युत यह बहुत सुगम है। आपको विश्वास नहीं होता तो उसका हमारे पास कोई इलाज नहीं है। आप कुछ-न-कुछ कल्पना करके मेरे लिये ऐसा मान लेते हो कि यह तो ऐसे ही कहता है! मैंने कोई भाँग नहीं पी है। कोई नशेमें आकर मैं नहीं कहता हूँ। फिर भी आपका विश्वास नहीं बैठता तो उसका कोई इलाज नहीं है।

भगवत्प्राप्ति बहुत सुगम है, बहुत सरल है। संसारमें इतना सुगम काम कोई है ही नहीं, हुआ ही नहीं, होगा ही नहीं, हो सकता ही नहीं! भगवान्‌ने कृपा करके अपनी प्राप्तिके लिये ही मानव-शरीर दिया है, अतः उनकी प्राप्तिमें सुगमता नहीं होगी तो फिर सुगमता किसमें होगी? भगवत्प्राप्तिके सिवाय मनुष्यका क्या प्रयोजन है? दुःख भोगना हो तो नरकोंमें जाओ, सुख भोगना हो तो स्वर्गमें जाओ और दोनोंसे ऊँचा उठकर असली तत्त्वको प्राप्त करना हो तो मनुष्य-शरीरमें आओ। ऐसी विलक्षण स्थिति मनुष्य-शरीरमें ही हो सकती है और बहुत जल्दी हो सकती है। इसमें आपको केवल इतना ही काम करना है कि आप इसकी उत्कट अभिलाषा जाग्रत् करो कि हमें तो इसीको लेना है। इतनी जोरदार अभिलाषा जाग्रत् हो कि आपको धन और भोग अपनी तरफ खींच न सकें। सुख-सुविधा, सम्मान, आदर—ये आपको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

न खींच सकें। जैसे बचपनमें खिलौने बड़े अच्छे लगते थे, पी-पी सीटी बजाना बड़ा अच्छा लगता था, पर अब आप उनसे ऊँचे उठ गये। अब वे अच्छे नहीं लगते। अब मिट्टीका घोड़ा, सीटी आदि अच्छे लगते हैं क्या ? क्या मनमें यह बात आती है कि हाथमें झुनझुना ले लें और बजायें ? जैसे इनसे ऊँचे उठ गये, इस तरहसे पदार्थोंसे, भोगोंसे, रुपयोंसे, सुखसे, आरामसे, मानसे, बड़ाईसे, प्रतिष्ठासे,वाह-वाहसे ऊँचे उठ जाओ तो उस तत्त्वकी प्राप्ति स्वतः हो जायगी। न सम्मान रहेगा, न प्रतिष्ठा रहेगी, न पदार्थ रहेंगे, न रुपये रहेंगे, न कुटुम्ब रहेगा, न शरीर रहेगा, न यह परिस्थिति रहेगी। ये तो रहेंगे नहीं। इनके रहते हुए इनसे ऊँचे उठ जाओ तो तत्त्वकी प्राप्ति तत्काल हो जाय; क्योंकि वह तो नित्यप्राप्त है। केवल इधर उलझे रहनेके कारण उसकी अनुभूति नहीं हो रही है।

श्रोता—हमलोग कितना सुनते हैं, प्रयत्न भी करते हैं, फिर भी संसारसे सुखबुद्धि नहीं जाती महाराजजी !

स्वामीजी — इसमें आपका प्रयत्न काम नहीं देगा, आपका दुःख काम देगा। यह जो संसारकी आसक्ति मिटती नहीं है, इसका दुःख होना चाहिये, जलन होनी चाहिये कि कैसे करूँ ! यह कैसे मिटे ? यह दुःखकी मात्रा बढ़ेगी, तब यह आसक्ति मिटेगी। यह प्रयत्नसे नहीं मिटती। प्रयत्न जितना करोगे, संसारका सहारा लेकर करोगे, मन-बुद्धि-इन्द्रियाँ-शरीरका सहारा लेकर करोगे। जड़का आश्रय लेना पड़ेगा। फिर जड़तासे ऊँचे कैसे उठोगे ? पर इसका दुःख होगा, जलन होगी, सन्ताप होगा तो इस आगमें यह शक्ति है कि संसारके भोगोंकी और संग्रहकी इच्छाको जला देगी। आपको ऐसी लगन लग जाय कि हमें तो उस तत्त्वको ही प्राप्त करना है। अधूरी चीज नहीं लेनी है। अधूरा सुख नहीं

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

लेना है। निर्वाहमात्रकी रोटी खा लेनी है, निर्वाहमात्रका कपड़ा पहन लेना है। हमें सुख नहीं लेना है, आराम नहीं लेना है। ऐसे विचार होनेसे उसकी उत्कट अभिलाषा जाग्रत् होगी। उत्कट अभिलाषा होनेसे उस तत्त्वका अनुभव हो जायगा, क्योंकि वह तत्त्व सब जगह मौजूद है, संसार मौजूद नहीं है।

श्रोता—ऐसा विचार कैसे उत्पन्न हो ?

स्वामीजी—अभी जो बातें कही हैं, इन बातोंका आदर करो। आप अनुकूल भोजनमें राजी हो जाते हो, कोई आपको बढ़िया-बढ़िया भोजन परोसे तो राजी हो जाते हो, कोई आदर करे तो राजी हो जाते हो तो अधिकारी नहीं हो इस तत्त्वके ! जो अनुकूलतामें राजी होता है उसमें मनुष्यपना है ही नहीं ! अगर परमात्मप्राप्ति चाहते हो तो इसमें उलझो मत। इसमें सुख मत मानो। कोई आपके अनुकूल हो जाय तो बड़ा अच्छा लगता है और कोई आपको हितकी कड़वी बात कह दे तो आपको बुरा लगता है। जिसको हितकी बात भी बुरी लगती है, वह कैसे उस तत्त्वको प्राप्त कर सकता है? जो आपके मनके अनुकूल चिकनी-चुपड़ी बात करे, वह आदमी अच्छा लगता है तो आप इस तत्त्वके अधिकारी नहीं हो। आप असली सत्संगमें टिक नहीं सकते, ठहर नहीं सकते। बिना ठहरे उस तत्त्वकी प्राप्ति होती नहीं। यह अपने हृदयपर हाथ रख करके सोचो।

वह तत्त्व सबमें निरन्तर रहता है। सब देशमें, सब कालमें, सब वस्तुओंमें, सम्पूर्ण व्यक्तियोंमें, सम्पूर्ण परिस्थितियोंमें, सम्पूर्ण घटनाओंमें, सम्पूर्ण अवस्थाओंमें वह तत्त्व निरन्तर ज्यों-का-त्यों रहता है। अतः इन सब नष्ट होनेवाली वस्तुओंसे विमुख हो जाओ अर्थात् इनसे सुख मत लो, इनमें रीझो मत, उलझो मत। तत्त्व यहाँ ही मिल जायगा। अगर इससे सुख लोगे तो दुःखके सिवाय

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कुछ नहीं मिलेगा। आप थोड़ा विचार करो तो बिलकुल प्रत्यक्ष बात है। अतः आप इनसे रहित हो जाओ। वास्तवमें आप इनसे रहित हो, अगर रहित न होते तो इन पदार्थों, व्यक्तियों, अवस्थाओं आदिके संयोग और वियोगको कौन देखता? इनके संयोग-वियोगको देखनेवाला इनसे अलग होता है। अतः आप इतना ख्याल रखो कि संयोग और वियोगको तटस्थ होकर देखते रहो, उनमें फँसो मत।

वह तत्त्व आपको स्वतः प्राप्त है। उसकी प्राप्तिमें कठिनता कैसी? कठिनता तो अनुकूल परिस्थितिकी प्राप्तिमें है, अनुकूल भोगोंकी प्राप्तिमें है, सम्मानकी प्राप्तिमें है, नीरोगताकी प्राप्तिमें है। उत्पत्ति-विनाशशील वस्तुओंकी प्राप्तिमें कठिनता है; क्योंकि वे टिकनेवाली नहीं हैं; अतः मिलनेवाली नहीं हैं। वे सीमित हैं; अतः सबको नहीं मिलतीं। परन्तु परमात्मतत्त्व असीम है; अतः वह सबका अपना है और सबमें है। उसकी प्राप्तिके लिये आप उत्पत्ति-विनाशशील वस्तुओंसे रहित हो जायँ। जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्तिसे रहित हो जायँ। जाग्रत्‌में जितने पदार्थ, क्रियाएँ, घटनाएँ घटती हैं, उनसे रहित हो जायँ। ये तो बनने-बिगड़नेवाले हैं, हम इनके साथ नहीं हैं—ऐसे चुप हो जाओ, इनसे अलग हो जाओ। दिनमें पन्द्रह, बीस, पचीस बार, सौ-दो-सौ बार एक-एक, दो-दो सेकेंडके लिये भी आप इनसे अपनेको अलग अनुभव करके देखो। मिनटभरके लिये अलग हो जाओ, तब तो कहना ही क्या! अगर चुप होनेपर हृदयमें उथल-पुथल मचे तो उससे भी अलग हो जाओ। यह उथल-पुथल भी जानेवाली है, मिटनेवाली है। कई संकल्प-विकल्प हो जायँ, वे भी मिटनेवाले हैं। मिटनेवाले हैं—बस, इतना ख्याल रखो। मिटनेवालेमें क्या राजी और क्या नाराज हों? न पदार्थोंके संयोग-वियोगसे राजी-नाराज

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

होना है, न संकल्पोंके संयोग-वियोगसे राजी-नाराज होना है। अच्छे-से-अच्छे संकल्प आ जायँ तो उनसे भी राजी नहीं होना है और बुरे-से-बुरे संकल्प आ जायँ तो उनसे भी नाराज नहीं होना है। राजी-नाराज न होनेसे गुणतीत हो जाओगे, तत्त्वकी प्राप्ति हो जायगी—

**ज्ञेयः स नित्यसंन्यासी यो न द्वेष्टि न काङ्क्षति।**
**निर्द्वन्द्वो हि महाबाहो सुखं बन्धात्प्रमुच्यते॥**

(गीता ५। ३)

अनुकूलता-प्रतिकूलता कुछ भी आये, इच्छा-द्वेष मत करो, सुखी-दुःखी मत होओ। चाहे मान हो, चाहे अपमान हो; कोई आदर करे, चाहे निरादर करे; अनुकूल पदार्थ मिले, चाहे प्रतिकूल पदार्थ मिले; अनुकूल व्यक्ति मिले, चाहे प्रतिकूल व्यक्ति मिले; केवल इतनी बात करनी है कि इसमें राजी और नाराज न हों। अगर राजी-नाराज हो जाते हैं तो ऐसा समझें कि यह तो बड़ी आफत है! मैंने कई बार कहा है कि सुखका भी दुःख होना चाहिये और दुःखका भी दुःख होना चाहिये। अनुकूल परिस्थितिमें सुखी हो गये तो दुःख होना चाहिये कि हम सुखमें राजी क्यों हो गये और प्रतिकूल परिस्थितिमें दुःखी हो गये तो दुःख होना चाहिये कि हम दुःखी क्यों हो गये! हम तो द्वन्द्वमें फँस गये! हम सुखी-दुःखी हो गये तो यह हमारी गलती हुई। केवल इसको गलती मानते रहो कि यह ठीक नहीं है। यह कर सकते हो कि नहीं? बताओ।

श्रोता—महाराजजी! सर्वत्र ऐसा नहीं होता।

स्वामीजी—सर्वत्र नहीं होता, आंशिक होता है तो कोई हर्ज नहीं। कुछ ऐसी परिस्थितियाँ हैं, जिनमें सम रहना हमारे वशकी बात नहीं और कुछ ऐसी परिस्थितियाँ हैं, जिनमें हम सम रह

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सकते हैं। अतः जिस परिस्थितिमें सम रहना आपको सुगम दीखता है, उसमें आप सम रह जाओ तो इसके दो परिणाम होंगे— पहला, जिसमें सम रहना आपको कठिन मालूम देता है, उसमें सम रहना सुगम हो जायगा; और दूसरा, जिन कमियोंका पता ही नहीं लगता, उनका पता लगने लगेगा। अतः जितना सुगमतापूर्वक होता है, उतना तो कर ही दो। आजसे ही आप इतनी बात मान लो कि जिसमें सम रहना सुगम है, उसमें हम सम रहेंगे।

——::o::——

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ श्रीहरिः ॥

# परमात्मप्राप्तिमें मुख्य बाधा—सुखासक्ति

**कलकत्ता**

**४-१-८६**

आपका पक्का विचार हो जाय तो परमात्मतत्त्वकी प्राप्ति कठिन नहीं है, संसारका हृदयसे त्याग करना कठिन है। यह जो सुखासक्ति है— संयोगजन्य सुख है, आरामका सुख है, मानका सुख है, संग्रहका सुख है, मेरी बात रह जाय— यह अभिमानका सुख है, यही खास बाधा है। इसीका त्याग कठिन मालूम देता है। इसका त्याग करनेके बाद परमात्मतत्त्वकी प्राप्ति सीधी ही है; क्योंकि परमात्मतत्त्व सबको प्राप्त है और उसमें बड़ा भारी आनन्द है। इस संयोगजन्य सुखका त्याग सुगमतासे कैसे हो ? सुगमतासे इसका त्याग तब होता है, जब भीतरका भाव बदल जाय कि दूसरेको सुख कैसे हो ? दूसरेका सम्मान कैसे हो ? दूसरेकी प्रशंसा कैसे हो ? दूसरेका हित कैसे हो ?

श्रोता—भीतरका भाव कैसे बदले महाराजजी !

स्वामीजी—यह तो खुदके बदलनेसे बदलेगा भाई ! भाव बदलना अपने हाथकी बात है। भाव ऐसे बदलो कि हमें सुख नहीं लेना है। भोजन करो, पर भोजनका सुख मत लो; कपड़ा पहनो, पर कपड़ेका सुख मत लो। नींद लो, पर नींदका सुख मत लो। कपड़ा ओढ़ो, पर ओढ़नेका सुख मत लो। संसारको देखो, पर देखनेका सुख मत लो। बात अच्छी-अच्छी सुनो, पर सुननेका सुख मत लो। अच्छा विचार करो, पर अच्छे विचारका सुख मत लो।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

श्रोता—इनमें सुख मालूम देता है !

स्वामीजी—मालूम देता है, तभी तो भोगना नहीं है। सुख मालूम देना दोषी नहीं है, उससे राजी होना दोषी है। कोई आदमी हमारे अनुकूल हो जाय तो हम राजी हो जाते हैं कि यह आदमी बड़ा अच्छा है। अतः राजी होना और उस आदमीको अच्छा मानना—ये दो दोष आते हैं। कोई आदमी हमारा तिरस्कार करता है तो हमें दुःख होता है और हम उस आदमीको खराब मान लेते हैं। अतः दुःखी होना और उस आदमीको खराब मानना—ये दो दोष आते हैं। सुख लेना और दुःखी होना—ये दोनों मुख्य बाधाएँ हैं। जो सुख देता है, उस आदमीको अच्छा मानते हैं तो अच्छा मानना दोष नहीं है, पर सुखके कारण अच्छा मानते हैं—यह दोष है। सुख लेना इतना दोषी नहीं है, जितना सुखसे राजी होना दोषी है।

सुख-दुःखका ज्ञान होना दोषी नहीं है, सुखी-दुःखी होना दोषी है। भगवान्‌ने क्या सुन्दर कहा है—**'दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः'** (गीता२। ५६)। दुःखका ज्ञान हो, पर मनमें उद्वेग न हो और सुखका ज्ञान हो, पर भीतरमें स्पृहा न हो तो बुद्धि स्थिर हो जायगी। देखो, यह ऐसी गहरी बात है कि जल्दी पता नहीं लगता है। हमें तो बहुत वर्षोंतक पता नहीं लगा, आपलोगोंकी आप जानें। हमारी ऐसी खोज रहती थी कि बाधा क्या है और क्यों है ? सुनते हैं, समझते हैं, पढ़ते हैं, विचार करते हैं, फिर भी जैसी स्थिति होनी चाहिये, वैसी नहीं हो रही है, तो बाधा क्या है ? यह बाधा यहाँ लगती है कि अनुकूलतामें हम राजी होते हैं और प्रतिकूलतामें हम नाराज होते हैं। राजी-नाराज होना, सुखी-दुःखी होना भोग है। जितने भी सम्बन्धजन्य भोग हैं, वे सब-के-सब दुःखोंके कारण हैं—**'ये हि संस्पर्शजा भोगा**

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दुःखयोनय एव ते' (गीता ५। २२)। सुखके भोगीको भयंकर दुःख पाना पड़ेगा। कोई टाल नहीं सकता उसको। सुख अपनी मरजीसे भोगेंगे और दुःख परवश होकर, पराधीन होकर भोगेंगे।

श्रोता—सुखकी आसक्ति कैसे छूटे ?

स्वामीजी— मैंने पहले ही यह बात बतायी कि हम अपना भाव बदल दें कि दूसरेको सुख कैसे हो ? उसका हित कैसे हो ? उसका कल्याण कैसे हो ? उसकी सद्गति कैसे हो ? उसका सुधार कैसे हो ? उसकी उन्नति कैसे हो ?

श्रोता—भाव कैसे बदलेगा महाराजजी ! गुरु-कृपासे या सत्संगसे ?

स्वामीजी—यह स्वयंसे बदलेगा। दूसरी बात हमने सोच रखी है, वह है— सत्संग। सत्संगमें आपसमें ऐसे विचार होते रहें तो इससे बड़ा भारी लाभ होता है। जैसे, एक कमा करके धनी बनता है और एक धनीकी गोद चला जाता है। गोद जानेवालेको क्या जोर आता है ? आज कँगला, कल लखपति ! कमाया हुआ धन मिलता है। ऐसे ही सत्संगके द्वारा कमाया हुआ धन मिलता है। जिन लोगोंने साधन किया है, विचार किया है और अपने साधनमें ऊँचे बढ़े हैं, उनको इसमें कितने वर्ष लगे हैं ! परन्तु वे अपनी बात हमें बता दें तो हमारेको कमाया हुआ धन मिल गया न ?

श्रोता—महाराजजी ! सत्संग हमेशा मिलता नहीं है।

स्वामीजी—तो जब मिलता हो, तब पकड़ो। सत्संगके विषयमें हमने एक बहुत मार्मिक बात पढ़ी है कि सत्संग एक बार ही होता है, दो बार होता ही नहीं। दो बार सुनना होता है, चर्चा होती है, चिन्तन होता है, क्रिया होती है। सत्-क्रिया, सत्-चिन्तन, सत्-श्रवण, सत्-कथन ! ये बार-बार होते हैं, पर सत्का संग

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

एक बार ही होता है। एक बार हो जायगा तो वह सदाके लिये हो जायगा, और उस एक बारके लिये ही बार-बार करना है।

अपने सत्-स्वरूपका एक बार बोध हो गया तो हो ही गया। आँख खुल गयी तो खुल ही गयी। क्या नींदसे जगनेके लिये अभ्यास करना पड़ता है ? अभ्याससे भी कल्याण होता है, पर देरीसे होता है। परन्तु ज्ञान (बोध) होनेसे, मान लेनेसे अथवा त्याग करनेसे तत्काल कल्याण होता है। बोधका, मान्यताका और त्यागका कभी टुकड़ा नहीं होता। ये एक ही साथ होते हैं पड़ाकसे !

जैसे विवाह होनेपर स्त्रीको अपनी माननेके लिये आपको अभ्यास नहीं करना पड़ता, उद्योग नहीं करना पड़ता। केवल दृढ़तासे मान लेते हो कि मेरी स्त्री है। ऐसे ही गुरु बनाते हो तो उसमें भी मान्यता होती है। इसी तरह 'भगवान् हमारे हैं' ऐसी दृढ़ मान्यता हो जाय। जैसे स्त्रीको जँच जाता है कि मेरा पति है और पतिको जँच जाता है कि मेरी स्त्री है, इससे भी बढ़कर जँचना चाहिये कि भगवान् मेरे हैं। पति-पत्नीका भाव तो अपना बनाया हुआ है, पर हम परमात्माके हैं—यह अपना बनाया हुआ नहीं है, प्रत्युत स्वतःसिद्ध है। केवल इस तरफ ध्यान देना है कि ओहो ! हम तो परमात्माके हैं ! जैसे अर्जुनने कहा—**'नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा'** (गीता १८।७३), मोह नष्ट हो गया और याद आ गयी ! याद आ गयी— यह नया ज्ञान नहीं है, नया सम्बन्ध नहीं है। भगवान्के सम्बन्धकी याद आ गयी तो यह पति-पत्नीके सम्बन्धकी अपेक्षा भी दृढ़ है; क्योंकि पति-पत्नीका सम्बन्ध तो मान्यता होकर आरम्भ हुआ है, पहले सम्बन्ध था नहीं। जिस समय विवाह होता है उस समय यह सम्बन्ध आरम्भ होता है।



CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

परन्तु भगवान्‌के साथ हमारा सम्बन्ध आरम्भ नहीं होता। यह तो सदासे ही है। केवल इस सम्बन्धको मान लेना है, बस। इसमें देरीका काम नहीं है। जिस दिन इसको मान लिया, उस दिन सत्संग हो गया,सत्‌का संग हो गया ! इसमें बाधा यह है कि हम जिन पदार्थोंको नाशवान् मानते हैं, उनको अपना मान लेते हैं। यह गलती है। इस गलतीको मिटानेमें जोर पड़ता है। परमात्मतत्त्वकी प्राप्ति तो सुगम है, पर संसारका त्याग करनेमें जोर पड़ता है। जिनको हम नाशवान् जानते हैं, उनका ही संग्रह करते हैं। उनसे ही सुख लेते हैं—यह जो हमारी चाल है न, यह चाल खतरनाक है। यह चाल बदलनी चाहिये। चालमें भी केवल भीतरका भाव बदलना है कि औरोंको सुख कैसे हो ? यह भले ही घरसे शुरू कर दो कि माता, पिता, स्त्री, पुत्र, परिवारको सुख कैसे हो ? पर साथ-साथ उनसे सुख लेनेकी आशा छोड़ दो। जिससे सुख मिलनेकी आशा नहीं है, उसको सुख नहीं पहुँचाते और जिसको सुख पहुँचाते हैं उससे सुख लेनेकी आशा रहती है—यह है खास बन्धन। इसलिये सुखकी आशा न रखकर दूसरोंको सुख देना है, दूसरोंको आराम देना है, दूसरोंकी बात रखनी है। अपनी बात रखोगे तो बड़ी भारी आफत हो जायगी। मेरी बात रहे— इसीमें बन्धन है।

हम जो नाशवान् पदार्थोंसे राजी होते हैं; जानते हैं कि ये रहेंगे नहीं, टिकेंगे नहीं,फिर भी उसमें रस लेते हैं, यहींसे बन्धन होता है।

श्रोता— महाराजजी ! हमारी तो आदत ही ऐसी पड़ गयी सुख लेनेकी !

स्वामीजी—भैया ! आदत छोड़नेके लिये ही तो हम यहाँ इकट्ठे हुए हैं। यहाँ कौन-से पैसे मिलते हैं ! आदत सुधारनेके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

समान कोई उन्नति है ही नहीं। अपने स्वभावको शुद्ध बना लेनेके समान आपका कोई पुरुषार्थ नहीं है। इसके समान कोई लाभ नहीं है। आपका पुरुषार्थ, उद्योग, प्रयत्न इसीमें होना चाहिये कि स्वभाव सुधरे। स्वभाव ही सुधरता है और क्या सुधरता है बताओ ? जो सन्त-महात्मा होते हैं, उनका भी स्वभाव ही सुधरता है। शरीरमें फरक नहीं पड़ता, स्वभावमें फरक पड़ता है। इसलिये अपनी आदत है, अपना स्वभाव है, अपनी प्रकृति है, इसको हमें शुद्ध करना है। इसमें जो-जो अशुद्धि आये, उसको निकालना है। यह एक ही खास काम करना है।

यह याद कर लो कि अपना स्वभाव सुधारनेमें हम स्वतन्त्र हैं, पराधीन नहीं हैं। इसको दूसरा कोई कर देगा—यह बात नहीं है। यह तो आप ही करोगे, तब होगा। जब कभी करोगे तो आपको ही करना पड़ेगा। आपने प्रश्न किया था कि यह गुरु-कृपासे होगा या संत-कृपासे होगा, तो इस विषयमें आपको एक मार्मिक बात बताता हूँ। अगर गुरु-कृपासे होगा तो गुरुको आप मानोगे, तब होगा। अगर संत-कृपासे होगा तो संतको आप मानोगे, तब होगा। अन्तमें बात आपके ऊपर ही आयेगी। आप मानोगे, तब होगा। ईश्वरकी कृपा तो सदासे है, पर आप मानोगे, तब वह काम करेगी। इसलिये गीतामें कहा गया है कि अपने-आपसे अपना उद्धार करे—**'उद्धरेदात्मनात्मानम्'** (६। ५)। आपके माने बिना गुरु क्या करेगा ? हम गुरु मानेंगे, संत-महात्मा मानेंगे, तभी वे कृपा करेंगे।

भगवान्‌के रहते हुए हम दुःख क्यों पा रहे हैं ? भगवान्‌में तीन बातें हैं— वे सर्वज्ञ हैं, दयालु हैं और सर्वसमर्थ हैं। ये तीनों बातें याद कर लें और इनका मनन करें। सर्वज्ञ होनेसे वे हमारे दुःखको जानते हैं। दयालु होनेसे वे हमारा दुःख नहीं देख सकते,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

दुःख देख करके पिघल जाते हैं। सर्वसमर्थ होनेसे वे हमारे दुःखको मिटा सकते हैं। इन तीनों बातोंमेंसे एक भी बात कम हो तो मुश्किल होती है जैसे—दयालु हैं, पर हमारे दुःखको जानते नहीं और दयालु हैं तथा हमारे दुःखको भी जानते हैं, पर दुःख दूर करनेकी सामर्थ्य नहीं ! परन्तु तीनों बातोंके मौजूद रहते हुए हम दुःखी होते हैं, यह बड़े आश्चर्यकी बात है !

एक कायस्थ सज्जन थे। उन्होंने मेरेसे कहा कि क्या करें, मेरी लड़की बड़ी हो गयी, पर सम्बन्ध हुआ नहीं। मैंने कहा कि अभी एक तुम चिन्ता करते हो, ज्यादा करोगे तो हम दोनों चिन्ता करने लग जायँगे, दोनों रोने लग जायँगे, इससे ज्यादा क्या करेंगे ? ज्यादा दया आ जायगी तो हम भी रोने लग जायँगे और हम क्या कर सकते हैं ? हमारे पास पैसा नहीं, हमारे पास सामर्थ्य नहीं ! ऐसे ही भगवान्‌को दया आ जाय और सामर्थ्य न हो तो वे रोने लग जायँगे और क्या करेंगे ? परन्तु वे सर्वसमर्थ हैं, सर्वज्ञ हैं और दयालु हैं, दयासे द्रवित हो जाते हैं। इन तीनों बातोंके रहते हुए हम दुःखी क्यों हैं ? इसमें कारण यह है कि हम इनको मानते ही नहीं, फिर भगवान् क्या करें, बताओ ?

श्रोता— अपनी ही कमी है महाराजजी !

स्वामीजी—अपनी कमी तो अपनेको ही दूर करनी पड़ेगी, चाहे आज कर लो, चाहे दिनोंके बाद कर लो, चाहे महीनोंके बाद कर लो, चाहे वर्षोंके बाद कर लो, चाहे जन्मोंके बाद कर लो, यह आपकी मरजी है ! जब आप दूर करना चाहो, कर लो। चाहे अभी दूर कर लो, चाहे अनन्त जन्मोंके बाद।

संसारको तो अपना मान लिया और भगवान्‌को अपना नहीं माना—यह बाधा हुई है मूलमें। अतः भगवान्‌को अपना मान लो—**'मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई'**। आप भगवान्‌को

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तो अपना मान लेते हो, पर **'दूसरो न कोई'**इसको नहीं मानते। इसको माने बिना अनन्यता नहीं होती। अनन्य चित्तवाले मनुष्यके लिये भगवान् सुलभ हैं—**'अनन्यचेताः सततं ..... तस्याहं सुलभः पार्थ'** (गीता ८।१४)। शर्त यही है कि अन्य किसीको अपना न माने। **'एक बानि करुनानिधान की। सो प्रिय जाकें गति न आन की॥'** (मानस ३।१०।४)। भगवान्के सिवाय दूसरा कोई सहारा न हो, प्यारा न हो, गति न हो, तो वह भगवान्को प्यारा लगता है। अतः अनन्य भावसे भगवान्को अपना मान लो। यह हमारे हाथकी बात है, हमारेपर निर्भर है। बातें सुनना, शास्त्र पढ़ना आदि इसमें सहायक है, पर करना अपनेको ही पड़ता है।

——::o::——

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ श्रीहरिः ॥

# सुखासक्तिसे छूटनेका उपाय

कलकत्ता

३१-१-८६

मूल बाधा—संयोगजन्य सुखकी आसक्ति। संयोगजन्य सुखकी जो भीतरमें एक लालसा है, इच्छा है, वासना है, लोभ है, यह खास बीमारी है। संयोगजन्य सुख तो ठहरता नहीं है, अगर उसकी लालसा त्याग दें तो बड़ा सीधा काम है।

विषयोंकी इच्छा है, भोगोंकी इच्छा है, संग्रहकी इच्छा है, मानकी इच्छा है, बड़ाईकी इच्छा है, आरामकी इच्छा है—यह हमारे सामने उत्पन्न होती है और नष्ट होती है। यह इच्छा कभी पूरी हो जाती है, कभी अधूरी रह जाती है; कभी आंशिक पूरी होती है, कभी नष्ट हो जाती है। परन्तु हम ज्यों-के-त्यों रहते हैं, हमारे स्वरूपमें कोई फरक नहीं पड़ता। अगर अपने स्वरूपमें स्थित हो जायँ तो इच्छाएँ मिट जायँगी और अगर इच्छाओंको मिटा दें तो अपने स्वरूपमें स्थिति हो जायगी। दोनोंमेंसे जो चाहो,सो कर लो। सत्‌की जिज्ञासासे भी, असत्‌की निवृत्तिसे भी सत्‌की प्राप्ति होती है।

जिस सुखकी उत्पत्ति होती है और नाश होता है, ऐसे सुखकी लालसा मिटानी है—इतना काम करना है। संयोगजन्य सुख खुद तो हरदम रहता नहीं और नित्य-निरन्तर रहनेवाले परमात्मतत्त्वके सुखसे वञ्चित कर देता है, कितने अनर्थकी बात है! ऐसे संयोगजन्य सुखका भी त्याग नहीं कर सकते तो हम क्या त्याग कर सकते हैं!

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सुखकी कामना उत्पन्न और नष्ट होती है, पर आप उत्पन्न और नष्ट नहीं होते हो। कामना आपमें होती है, आप कामनामें नहीं होते हो। आप व्यापक हो , कामना व्याप्य है अर्थात् आप सब देशमें हो, कामना एक देशमें है; आप सब कालमें हो, कामना एक कालमें है; और कामना हो या न हो, आपमें कोई फरक नहीं पड़ता, आप ज्यों-के-त्यों रहते हैं। कामनाको केवल आपने ही पकड़ रखा है, कामनामें आपको पकड़नेकी कोई ताकत नहीं है। सत्संगके समय कामना नहीं रहती, इसलिये अनुभव होता है कि तत्त्व ज्यों-का-त्यों है। कामना होनेपर यह अनुभूति वैसी नहीं रहती। इसलिये यह प्रश्न होता है कि सत्संग सुनते समय जैसा भाव रहता है, वैसा और समयमें नहीं रहता। वास्तवमें तो वह तत्त्व नित्य-निरन्तर वैसे-का-वैसा ही रहता है। सत्संग सुनो चाहे मत सुनो, चाहे कुसंग करो, सत्तत्त्व तो ज्यों-का-त्यों ही रहता है, उसका कभी नाश नहीं होता। परन्तु आपकी दृष्टि असत्‌की तरफ चली जाती है तो वह असत् आपपर हावी हो जाता है और ऐसा दीखने लगता है कि मानो सत् नहीं रहा; जो कभी हो और कभी न हो, वह सत् कैसे हो सकता है? सत् तो हरदम ज्यों-का-त्यों रहता है। असत्‌की लालसामें सत्‌को ढकनेकी शक्ति नहीं है; क्योंकि सत् व्यापक है और असत् व्याप्य है। तुच्छ चीज महान्‌को ढक दे, आवृत कर दे—ऐसा नहीं है। **'आवृतं ज्ञानमेतेन· · · ·'** (गीता ३।३९) 'इस कामनासे वह ज्ञान आवृत है'—ऐसा कहनेका तात्पर्य है कि ज्ञान आवृत नहीं होता, आपकी दृष्टि आवृत होती है। जैसे, बादल आनेपर सूर्य नहीं दीखता तो हम कहते हैं कि सूर्य ढक गया। परन्तु वास्तवमें सूर्य नहीं ढकता, हमारी आँख ढक जाती है। सूर्य तो भूमण्डलसे भी बड़ा है, वह थोड़ेसे बादलके टुकड़ेसे कैसे ढक सकता है?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ऐसे ही कामना आती है तो हम मान लेते हैं कि हम कामनाके वशीभूत हो गये, कामनाने हमें हरा दिया। वास्तवमें यह बात नहीं है। आपको कामना कैसे ढक सकती है ? कामना तुच्छ है और आप महान् हैं—**'नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः॥'** (गीता २।२४)। आप कामनाकी उत्पत्ति और विनाशको जाननेवाले हो। जो उत्पत्ति और विनाशको जाननेवाला होता है, वह अविनाशी होता है, बड़ा होता है। जो उत्पन्न और नष्ट होता है, वह तो छोटा होता है, पर जो उसकी उत्पत्ति और विनाशको जाननेवाला होता है, वह बड़ा होता है।

श्रोता—सुखकी आसक्ति हमारेपर एकदम अधिकार जमा लेती है। उस समय हमें अपने बलका पता ही नहीं लगता। हम निर्बल हो जाते हैं, पराजित हो जाते हैं !

स्वामीजी—जिस समय कामना पैदा होती है, आसक्ति पैदा होती है, उस समय उसका बड़ा असर पड़ता है— यह बात ठीक है; परन्तु इस बातपर विश्वास रखो कि सत्-वस्तु तो निष्कामता ही है। अतः निष्कामभावको सकामभाव दबा ही नहीं सकता। सकामभाव उत्पन्न और नष्ट होता है, पर निष्कामभाव सकामभावके उत्पन्न होनेसे पहले भी रहता है, सकामभावके नष्ट होनेके बाद भी रहता है और सकामभावके समय भी ज्यों-का-त्यों रहता है। वास्तवमें निष्कामभाव ही नित्य है। इसलिये कामना पैदा होनेपर आप उससे हार स्वीकार मत करो। बड़ी-से-बड़ी कामना हो जाय, कामनामें आप बह जाओ, कामनाके वशीभूत हो जाओ तो भी आप कृपा करके इतना ख्याल रखो कि यह कामना टिकनेवाली नहीं है और निष्कामता मिटनेवाली नहीं है। कामना तो उत्पन्न और नष्ट होती है, पर आप हरदम रहते हो। अतः कामना आपमें तो नहीं हुई, फिर वह आपको कैसे ढक

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

सकती है, आपको कैसे पराजित कर सकती है ? आप जिस समय अपनेको पराजित मानते हो, उस समय भी यह बात जाग्रत् रखो कि कामना आगन्तुक है, यह रहनेवाली नहीं है। भगवान्ने साफ कहा है कि आप इनके आने-जानेकी तरफ देखो, इनके आने-जानेका ख्याल रखो। फिर सुगमतासे इनपर विजय प्राप्त कर लोगे। आप कामनामें कितने ही बह जाओ, पर **'आगमापायिनोऽनित्याः'** को याद रखो। मैंने तो कई बार कहा है कि अरे भाई !यह मन्त्र है ! जैसे बिच्छू डंक मार दे तो उसका मन्त्रद्वारा झाड़ा करनेसे जहर उतर जाता है, ऐसे ही आप **'आगमापायिनोऽनित्याः'**का जप शुरू कर दें तो कामना आदि आगन्तुक दोषोंका जहर उतर जायगा, उनकी जड़ कट जायगी। इतनी शक्ति है भगवान्के कहे हुए इन शब्दोंमें ! यह क्रियात्मक साधन है और बड़ा सुगम है, आप करके देखो।

भागवतके ये पद मेरेको बहुत प्रिय लगते हैं'— **'जुषमाणश्च तान् कामान् दुःखोदर्कांश्च गर्हयन् ॥'** (११ । २० । २८)। अगर भोगोंका त्याग न कर सकें तो उनको दुःखरूप समझकर, उनकी निन्दा करते हुए भोगें। भोगोंको भोगते हुए भी उनको अच्छा न समझें, उनको नापसन्द करें, तो उनसे छुटकारा मिल जायगा। उनके परवश होनेपर भी आप उनसे दबो मत। केवल इतना याद रखो कि हम रहनेवाले हैं और ये जानेवाले हैं। आप करके देखो। यह साधन कठिन है क्या ? अभी इसका विचार कर लो, मनन कर लो तो फिर इसको भूलोगे नहीं। असत्में रहनेकी ताकत नहीं है। असत्की सत्ता नहीं होती और सत्का अभाव नहीं होता—**'नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।'**(गीता२ । १६)। आपकी सत्ता है और आप असत्से दब जाते हैं, तो यह दबना इतना दोषी नहीं है, जितना दोषी असत्का

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

महत्त्व मानना है कि यह तो बड़ा प्रबल है। यह मान्यता ही गजब करती है।

एक राजपूत था और एक बनिया था। दोनों आपसमें भिड़ गये तो राजपूतको गिराकर बनिया ऊपर चढ़ बैठा। राजपूतने उससे पूछा—अरे !तू कौन है ? उसने कहा—मैं बनिया हूँ। सुनते ही राजपूतने जोशमें आकर कहा कि अरे ! बनिया मेरेको दबा दे ! यह कैसे हो सकता है ! और चट बनियेको नीचे दबा दिया। यह तो एक दृष्टान्त है। तात्पर्य यह है कि आप तो निरन्तर रहनेवाले हो और कामना निरन्तर रहनेवाली है ही नहीं। जैसे राजपूतने सोचा कि मैं तो क्षत्रिय हूँ, मेरेको बनिया नहीं दबा सकता, ऐसे ही आप भी राजपूत हो , भगवान्के पूत हो; आप विचार करो कि असत्की कामना मेरेको कैसे दबा सकती है ? कामना भी असत्की और कामना खुद भी असत्,वह सत्को दबा दे— यह हो ही नहीं सकता। बस, इतनी ही बात है। लम्बी-चौड़ी बात है ही नहीं। अब इसमें क्या कठिनता है, आप बताओ ? एकदम सीधी बात है। आप थोड़ी हिम्मत रखो कि मैं तो हरदम रहनेवाला हूँ। बालकपनसे लेकर अभीतक मैं वही हूँ। मैं पहले भी था, अब भी हूँ और बादमें भी रहूँगा, नहीं तो किये हुए कर्मोंका फल आगे कौन भोगेगा ? मैं तो रहनेवाला हूँ और ये शरीर आदि असत् वस्तुएँ रहनेवाली हैं ही नहीं। इनके परवश मैं कैसे हो सकता हूँ ? नहीं हो सकता। आप हिम्मत मत हारो।

**हिम्मत मत छाड़ो नरां,मुख सूं कहतां राम।**
**हरिया हिम्मत सूं कियां, ध्रुव का अटल धाम ।।**

ये बातें बहुत सुगम हैं। आप पूरा विचार नहीं करते—यह बाधा है। न तो स्वयं सोचते हो और न कहनेपर स्वीकार करते हो। अब क्या करें, बताओ ? आप सत् हो और ये बेचारे असत्

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

हैं, आगन्तुक हैं। आप मुफ्तमें ही इनसे दब गये। अपने महत्त्वकी तरफ आप ध्यान नहीं देते। आप कौन हैं—इस तरफ आप ध्यान नहीं देते। आप परमात्माके अंश हो। आपमें असत् कैसे टिक सकता है ? यह आपके बलसे ही बलवान् हुआ है। इसमें खुदका बल नहीं है। यह तो है ही असत्! आप सत् हो और आपने ही इसको महत्त्व दिया है।

जैसे किसीका पुत्र मर गया, तो बड़ा शोक होता है कि मेरा लड़का चला गया ! लड़का तो एक बार मरा और शोक रोजाना करते हो, तो बताओ कि शोक प्रबल है या लड़केका मरना प्रबल है ? लड़का तो एक बार ही मर गया, खत्म हुआ काम, पर शोकको आप जीवित रखते हो। शोकमें ताकत कहाँ है रहनेकी ? शोक तो लड़केके मरनेसे पैदा हुआ है बेचारा ! उस शोकको आप रख सकोगे नहीं। कुछ वर्षोंके बाद आप भूल जाओगे। शोक आपसे-आप नष्ट हो जायगा। आप बार-बार याद करके उसको जीवित रखते हो, फिर भी उसको जीवित रख सकोगे नहीं। दस-पन्द्रह वर्षके बाद वह यादतक नहीं आयेगा। इसलिये उत्पन्न और नष्ट होनेवाली वस्तुको आप महत्त्व मत दो, उसकी परवाह मत करो। हमारी बात तो इतनी ही है कि आप असत्‌को महत्त्व क्यों देते हो ? अपने विवेकको महत्त्व क्यों नहीं देते ?

बहुत वर्षोंतक मेरेमें यह जाननेकी लालसा रही कि गड़बड़ी कहाँ है ? बाधा किस जगह लग रही है ? न चाहते हुए भी मनमें मान-बड़ाईकी, आदर-सत्कारकी, पदार्थोंकी इच्छा हो जाती है तो यह कहाँ टिकी हुई है ? यह छूटती क्यों नहीं ? वर्षोंके बाद इसकी जड़ मिली, वह है-सुखकी लोलुपता। हमें यह बात वर्षोंके बाद मिली, आपको सीधी बता दी । आपको सुगमतासे मिल गयी, इसलिये आप इसका आदर नहीं करते। यदि कठिनतासे मिलती

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तो आप आदर करते। आप पहाड़ोंमें भटकते, बद्रीनारायण जाते, खूब तलाश करते और इस तरह भटकते-भटकते कोई सन्त मिल जाता तथा वह यह बात कहता तो आप इसका आदर करते। अब रुपये कमाते हो, कुटुम्बके साथ घरोंमें मौजसे बैठे हो और सत्संगकी बातें मिल जाती हैं तो आप उनका महत्त्व नहीं मानते। उलटे ऐसा मानते हो कि स्वामीजी तो यों ही कहते हैं, ये दुकानपर बैठें तो पता लगे! इस तरह आप अपनी ही बातको प्रबल करते हो। सिद्ध क्या हुआ ? कि हमारी बात सच्ची है, इनकी (स्वामीजीकी) बात कच्ची है। आपने विजय तो कर ली, पर फायदा क्या हुआ ? आप जीत गये, हम हार गये, पर जीतमें आपका नुकसान ही हुआ।

एक धनी आदमीने कहा कि स्वामीजी रुपयोंके तत्त्वको जानते नहीं तो मैंने कहा कि देखो, मैंने रुपये रखे भी हैं और उनका त्याग भी किया है, इसलिये मैं दोनोंको जानता हूँ। परन्तु आपने रुपये रखे हैं, उनका त्याग नहीं किया है, इसलिये आप एक ही बातको जानते हो , दोनोंको नहीं जानते। कोई तत्त्व नहीं है रुपयोंमें। आप लोभसे दबे हुए हो, आपने रुपयोंका महत्त्व स्वीकार कर लिया है, फिर कहते हो कि हम जानते हैं। धूल जानते हो आप! जानते हो ही नहीं।

परमात्माको जाननेके लिये परमात्माके साथ अभिन्न होना पड़ता है और संसारको जाननेके लिये संसारसे अलग होना पड़ता है। परमात्मासे अलग रहकर परमात्माको नहीं जान सकते और संसारसे मिले रहकर संसारको नहीं जान सकते— यह सिद्धान्त है। ऐसा सिद्धान्त क्यों है ? कि वास्तवमें आप परमात्माके साथ अभिन्न हो और संसारसे अलग हो। परन्तु आपने अपनेको परमात्मासे अलग और संसारसे अभिन्न मान लिया, अब कैसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जानोगे ? जो बीड़ी, सिगरेट आदि पीता है, वह बीड़ी आदिको जान नहीं सकता। जो इनको छोड़ देता है, उसको इनका ठीक-ठाक ज्ञान हो जाता है। एक बार मैंने कहा कि चाय छोड़ दो। बहुतोंने चाय छोड़ दी। पासमें ही एक वकील बैठे थे, वे कुछ भी बोले नहीं। तीन-चार दिन बादमें वे मेरे पास आये और बोले कि चाय तो मैंने भी उसी दिन छोड़ दी थी, पर सभामें मेरी बोलनेकी हिम्मत नहीं हुई। चाय छोड़नेके बाद यह बात मेरी समझमें आयी कि जिस प्यालेसे गोमांसभक्षी चाय पीता है, छूतकी महान् बीमारीवाला चाय पीता है, उसी प्यालेसे हम चाय पीते हैं! इससे सिद्ध हुआ कि संसारको छोड़े बिना उसके तत्त्वको नहीं जान सकते।

सत्‌की प्राप्तिकी लालसा करो तो असत् छूट जायगा और असत्‌का त्याग करो तो सत्‌की प्राप्ति हो जायगी। दोनोंमेंसे कोई एक करो तो दोनों हो जायँगे। असत्‌का संग करते हुए, आसक्ति रखते हुए असत्‌को नहीं जान सकते और सत्‌से दूर रहकर बड़ी-बड़ी पण्डिताईकी बातें बघार लो, षट्शास्त्री पण्डित बन जाओ, तो भी सत्‌को नहीं जान सकते।

संसारकी आसक्ति दूर करनेका सुगम उपाय है—दूसरोंको सुख देना। माता, पिता, स्त्री, पुत्र, भाई, भौजाई आदि सबको सुख दो, पर उनसे सुख लो मत तो सुगमतासे आसक्ति छूट जायगी।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

जो क्रोधमें आकर अथवा किसी बातसे दुःखी होकर आत्महत्या कर लेता है, वह दुर्गतिमें चला जाता है अर्थात् भूत-प्रेत-पिशाच बन जाता है। आत्महत्या करनेवाला महापापी होता है। कारण कि यह मनुष्य-शरीर भगवत्प्राप्तिके लिये ही मिला है; अतः भगवत्प्राप्ति न करके अपने ही हाथसे मनुष्य-शरीरको खो देना बड़ा भारी पाप है, अपराध है, दुराचार है। दुराचारीकी सद्गति कैसे होगी ? अतः मनुष्यको कभी भी आत्महत्या करनेका विचार मनमें नहीं आने देना चाहिये।

**—दुर्गतिसे बचो नामक पुस्तकसे**

बदला लेनेकी भावना हमारी गलती है, भूल है। वह तो हमारे कर्मोंका फल भुगताकर हमें पवित्र कर रहा है। अतः यदि आपको बदला चुकाना हो तो सबसे पहले उसकी सेवा करो। जो दुःख देनेकी चेष्टा करता है, वह (पापोंका फल भुगताकर) आपको शुद्ध कर रहा है, आपका उपकार कर रहा है। उसका बदला लेना हो तो अपने तनसे, मनसे, वचनसे, धनसे, विद्यासे, योग्यतासे, पदसे, अधिकारसे उसकी सेवा करो, उसे सुखी बनाओ।

**—नित्ययोगकी प्राप्ति नामक पुस्तकसे**

गृहस्थको चाहिये कि वह धन कमानेकी अपेक्षा बच्चोंके चरित्रका ज्यादा ख्याल रखें; क्योंकि कमाये हुए धनको बच्चे ही काममें लेंगे। अगर बच्चे बिगड़ जायँगे तो धन उनको और ज्यादा बिगाड़ेगा। इस विषयमें अच्छे पुरुषोंका कहना है—***'पूत सपूत तो क्यों धन संचै ? पूत कपूत तो क्यों धन संचै ?'*** अर्थात् पुत्र सपूत होगा तो उसको धनकी कमी रहेगी नहीं और कपूत होगा तो संचय किया हुआ सब धन नष्ट कर देगा, फिर धनका संचय क्यों करें ?

**—गृहस्थमें कैसे रहें नामक पुस्तकसे**

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

संसारकी किसी भी वस्तुसे मनुष्यका सम्बन्ध नहीं है। समय समाप्त होते ही चट यहाँसे चल देना है। एक दिन सब वस्तुओंको ज्यों-का-त्यों छोड़कर जाना पड़ेगा। सब-की-सब वस्तुएँ यहीं पड़ी रह जायँगी। यह शरीर भी यहीं रह जायगा। इसलिये जबतक संसारमें रहना है, तबतक निष्कामभावसे दूसरोंकी सेवा करनी है। जब जायँगे, तब साथ कुछ ले नहीं जायँगे। बिलकुल कार्यालयके समान संसारमें काम (सेवा) करनेके लिये आये हैं।

—साधकोंके प्रति नामक पुस्तकसे

सज्जनो ! आप विचार करें तो यह बात प्रत्यक्ष दीखेगी कि जिन देशोंमें सन्त-महात्मा घूमते हैं, जिन गाँवोंमें, जिन प्रान्तोंमें सन्त रहते हैं और जिन गाँवोंमें सन्तोंने भगवान्‌के नामका प्रचार किया है, वे गाँव आज विलक्षण हैं दूसरे गाँवोंसे। जिन गाँवोंमें सौ-दो-सौ वर्षोंसे कोई सन्त नहीं गया है, वे गाँव ऐसे ही पड़े हैं अर्थात् वहाँके लोगोंकी भूत-प्रेत-जैसी दशा है। भगवान्‌का नाम लेनेवाले पुरुष जहाँ घूमे हैं, पवित्रता आ गयी, विलक्षणता आ गयी, अलौकिकता आ गयी। वे गाँव सुधर गये, घर सुधर गये, वहाँके व्यक्ति सुधर गये, उनको होश आ गया। वे स्वयं भी कहते हैं, हम मामूली थे पर भगवान्‌का नाम मिला, सन्त मिल गये तो हम मालामाल हो गये।

—भगवन्नाम नामक पुस्तकसे

भजन उसीको कहते हैं, जिसमें भगवान्‌का सेवन हो तथा सेवन भी वही श्रेष्ठ है, जो प्रेमपूर्वक मनसे किया जाय। मनसे प्रभुका सेवन तभी समुचितरूपसे प्रेमपूर्वक होना सम्भव है, जब हमारा उनके साथ घनिष्ठ अपनापन हो और प्रभुसे हमारा अपनापन तभी हो सकता है, जब संसारके अन्य पदार्थोंसे हमारा सम्बन्ध और अपनापन न हो।

—एकै साधे सब सधै नामक पुस्तकसे

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

॥ श्रीहरिः ॥

# परम श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज द्वारा विरचित उपलब्ध साहित्य

१. साधक-संजीवनी—गीताकी विस्तृत टीका (हिन्दी, अँग्रेजी, मराठी)
२. गीता-माधुर्य (हिन्दी, अँग्रेजी, मराठी, नेपाली गुजराती, तमिल, बँगला, कन्नड़, उर्दू)
३. गीता-दर्पण (हिन्दी, अँग्रेजी, मराठी)
४. वासुदेवः सर्वम्
५. नित्ययोगकी प्राप्ति
६. सहज साधना
७. महापापसे बचो (हिन्दी, बँगला)
८. सन्तानका कर्तव्य (हिन्दी, बँगला)
९. आवश्यक शिक्षा
१०. सच्चा गुरु कौन ?
११. एकै साधै सब सधै
१२. सत्संगकी विलक्षणता
१३. साधकोंके प्रति
१४. कल्याणकारी प्रवचन (हिन्दी, अँग्रेजी, गुजराती)
१५. तात्त्विक प्रवचन (हिन्दी, गुजराती)
१६. मानसमें नाम-वन्दना
१७. वास्तविक-सुख
१८. भगवन्नाम (हिन्दी, अँग्रेजी)
१९. कर्म-रहस्य (हिन्दी, तमिल)
२०. गृहस्थमें कैसे रहें ? (हिन्दी, अँग्रेजी, मराठी, बँगला)
२१. भगवान्‌से अपनापन
२२. जीवनका सत्य
२३. भगवत्प्राप्तिकी सुगमता
२४. स्वाधीन कैसे बनें ? (हिन्दी, अँग्रेजी)
२५. शरणागति
२६. सत्संगका प्रसाद
२७. अच्छे बनो
२८. जीवनका कर्तव्य
२९. जीवनोपयोगी कल्याणमार्ग
३०. सच्चा आश्रय
३१. नाम-जपकी महिमा
३२. मूर्ति-पूजा (हिन्दी, बँगला)
३३. हम ईश्वरको क्यों मानें ? (हिन्दी, बँगला)
३४. दुर्गतिसे बचो (हिन्दी, बँगला)
३५. साधन और साध्य
३६. मातृशक्तिका घोर अपमान
३७. जिन खोजा तिन पाइया
३८. किसानोंके लिये शिक्षा
३९. तत्त्वज्ञान कैसे हो ?

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

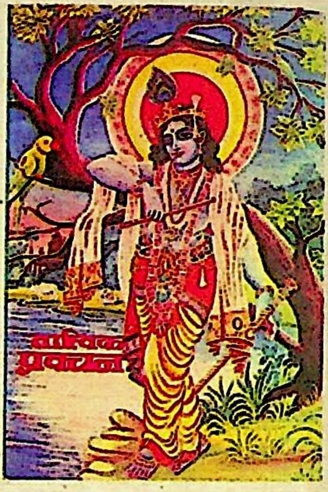

नोट—विशेष जानकारीके लिये गीताप्रेस, गोरखपुरकी पुस्तकोंका सूचीपत्र निःशुल्क मँगायें।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri